तुमने गालिब का नाम ज़रूर सुना होगा। वे उर्दू के सबसे बड़े शायर कहे जाते हैं। इस कारण विश्व साहित्य में भी उनका नाम है। वे दिल्ली के रहने वाले थे। आखिरी मुगल बादशाह बहादुरशाह ज़फर को खुद भी शायरी का शौक था। गालिब उनके दोस्त थे। सन् 1857 में भारत की पहली जनक्रान्ति हुई। हज़ारों निर्दोष व्यक्तियों को आज़ादी की इस लड़ाई में अँग्रेज़ों ने मार डाला। गालिब उन दिनों दिल्ली में थे। अँग्रेज़ों के अत्याचारों को खुद उन्होंने देखा। तब उन्होंने एक डायरी लिखी थी – दस्तम्बू। दस्तम्बू में गालिब ने 1857 में दिल्ली का हाल लिखा है। इसमें साधारण आदमी की मुसीबत और भूख तथा प्यास से तड़पते लोगों का भी ज़िक्र है।

डॉ. कैलाश नारद

गदर में गालिब

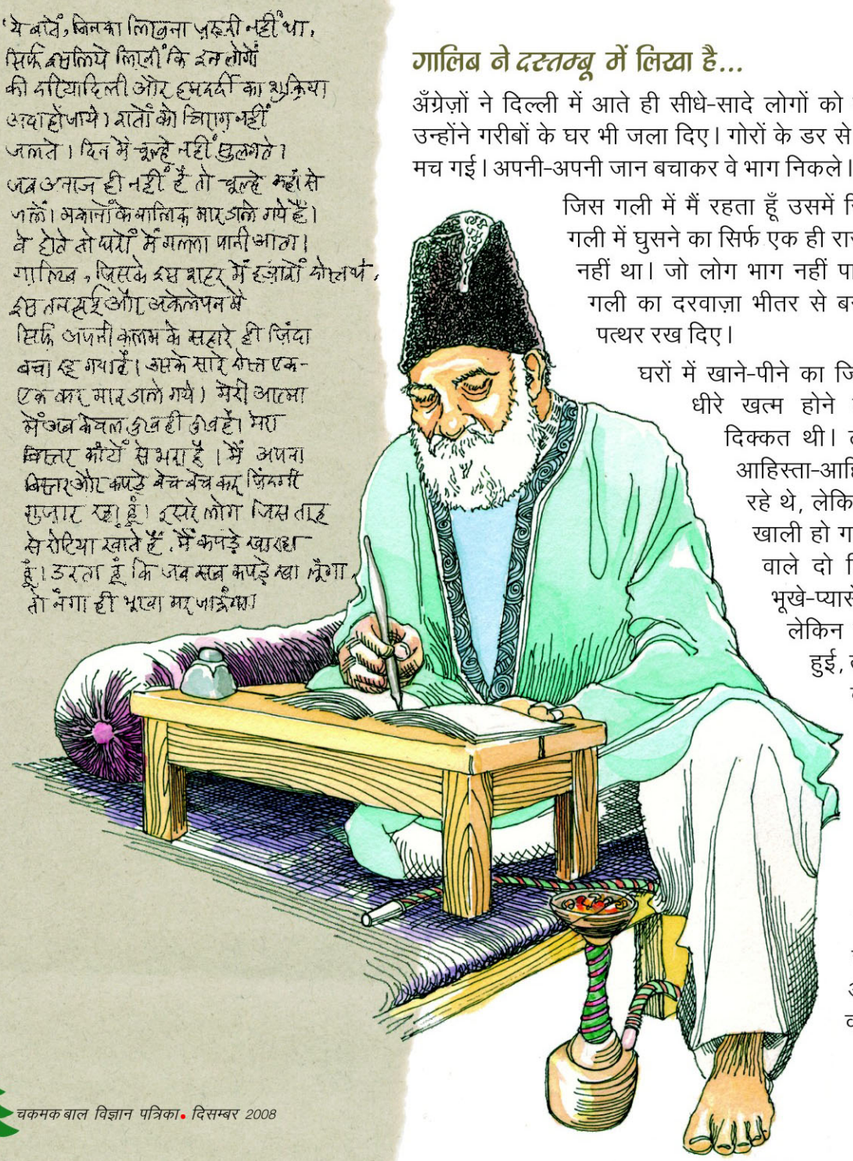

गालिब ने दस्तम्बू में लिखा है...

अँग्रेज़ों ने दिल्ली में आते ही सीधे-सादे लोगों को मारना शुरू कर दिया। उन्होंने गरीबों के घर भी जला दिए। गोरों के डर से दिल्ली वालों में भगदड़ मच गई। अपनी-अपनी जान बचाकर वे भाग निकले।

जिस गली में मैं रहता हूँ उसमें सिर्फ दस-बारह घर थे। गली में घुसने का सिर्फ एक ही रास्ता था। वहाँ कोई कुआँ नहीं था। जो लोग भाग नहीं पाए उन सब ने मिलकर गली का दरवाज़ा भीतर से बन्द कर दिया और वहाँ पत्थर रख दिए।

घरों में खाने-पीने का जितना सामान था, धीरे-धीरे खत्म होने लगा। पानी की बड़ी दिक्कत थी। लोग बड़ी सावधानी से आहिस्ता-आहिस्ता उस पानी को पी रहे थे, लेकिन आखिकार वे घड़े भी खाली हो गए। ऐसे में गली में रहने वाले दो दिन और दो रात तक भूखे-प्यासे समय काटते रहे। लेकिन जब प्यास बर्दाश्त नहीं हुई, तो परेशान लोगों ने गली का दरवाज़ा खोल दिया। वे पानी की तलाश में बर्तन लेकर निकल पड़े। लेकिन पानी तो दूर-दूर तक कहीं नहीं था। शोरा बारूद बनाने के काम में आता है।

उसी शोरे का पानी जब आसपास मिला तो गली वाले उस पानी को घरों में ले आए। वैसे ज़हरीले पानी को पीकर ही उन्होंने प्यास बुझाई। वह पानी इतना कड़वा और बदबूदार था कि लगा जैसे पानी नहीं, मौत पी रहे हों।

एक दिन बरसात हुई। खूब पानी बरसा। हमने एक चादर बाँध ली और एक मटका उसके नीचे रख दिया। वह पानी ही उस वक्त हमारे लिए सबसे बड़ी दौलत थी।

असली मुसीबत 5 अक्टूबर 1857 को आई, जब कुछ अँग्रेज़ मेरे घर में घुस आए। उन्होंने मेरे साथ मेरे दोनों बच्चों और नौकरों के साथ ही कुछ पड़ोसियों को भी गिरफ्तार कर लिया। वहाँ से कुछ दूरी पर कर्नल ब्राउन नाम का एक अँग्रेज़ अफसर था। गिरफ्तार किए गए लोग एक-एक कर उसके सामने पेश किए जा रहे थे। ब्राउन का चेहरा सुर्ख था। आँखें भी लाल-लाल थीं। उसकी ऊँचाई छह फुट से भी ज़्यादा थी। उसने मुझसे पूछा, "आप क्या करते हैं?"

मैंने कहा, "उर्दू में कविता लिखता हूँ।"

"तो तुम पोयट हो?" उसने कहा।

मैंने सिर हिलाकर हामी भरी। "हाँ।"

मेरे जवाब से ब्राउन को खुशी हुई। उसने अपने सिपाहियों को हुक्म दिया, "इनको इज़्ज़त के साथ घर वापस छोड़ आओ।"

मैंने कर्नल ब्राउन से निवेदन किया कि मेरे साथ गिरफ्तार किए गए पड़ोसी बेहद सीधे-सादे लोग हैं। उन्हें भी रिहा कर दिया जाए।

"ये लोग भी कविता करते हैं।" मैंने कहा।

कर्नल ने उनको भी घर जाने की इजाज़त दे दी। इस तरह कविता के कारण उस रोज़ करीब पचास आदमियों की जानें बच गईं।

हम गली वालों ने तो किसी तरह अपने प्राण बचा लिए, मगर मैं उन हज़ारों अभागे दिल्ली वालों के बारे में क्या कहूँ, जो हवालात और कैदखाने में बन्द कर दिए गए थे। जेल शहर से बाहर थी और हवालात दिल्ली के भीतर। इन दोनों ही जगहों में बेशुमार बेगुनाहों को ठूँस-ठूँसकर भर दिया गया था – इस कदर भर दिया गया कि लगता था, आदमी के भीतर आदमी समाया जा रहा हो। साँस लेने में भी दिक्कत हो रही थी। इन दोनों ही कैदखानों के बन्दियों को बाद में फाँसी दे दी गई। नहीं मालूम, कितने लाख लोग मार डाले गए।

चित्रः दिलीप चिंचालकर

दिल्ली में अब कुछ ही हज़ार लोग बचे होंगे। बाकी सब, अँग्रेज़ों के गुस्से का शिकार हो गए। बचे सिर्फ वे, जो दिल्ली से भाग गए। वे लोग खुशकिस्मत थे, वरना उन्हें भी फाँसी दे दी जाती। दिल्ली में रहना ही उन दिनों मानों अपराध हो गया था।

मेरी पहचान का भिश्ती था – चिराग अली। बेहद सीधा आदमी। रोज़ सुबह-शाम नहर का पानी अपनी मशक में भरता और अल्लाह के गुण गाता हुआ सड़कों को सींचा करता। खाने के लिए जो भी रूखी-सूखी मिल जाती उसी को गले के नीचे उतार अपने में मगन रहता। एक रोज़ दिल्ली के बड़े हाकिम हडसन साहब जब सड़क से अपने घोड़े पर सवार होकर निकल रहे थे, चिराग अली सड़क सींच रहा था। उसने हडसन साहब को सलाम नहीं किया, ईश्वर के गुण गाता रहा। हडसन साहब को जो गुस्सा आया, उन्होंने अपनी तलवार से अभागे चिराग अली का पेट चीर डाला और उसकी लाश दिल्ली दरवाज़े पर टाँग दी। इन्हीं हडसन साहब ने बादशाह बहादुर शाह जफर के दोनों बेटों शाहज़ादा फज़ल और मिर्ज़ा अबू बकर का भी खून कर उनके सिर दिल्ली दरवाज़े पर लटका दिए थे। हडसन को हिन्दुस्तानियों का खून करने में बड़ा मज़ा आता था।

मेरे पड़ोस में एक गरीब औरत मेहरुन्निसा रहती हैं। उसके पति की मौत को सात साल हुए हैं। अकेली औरत। दूसरों के घर में झाड़ू

लगाकर किसी तरह से अपनी गुज़र-बसर करती थी। लेकिन जब घर ही नहीं रहे, बस्ती की बस्तियाँ जला दी गईं तो मेहरुन्निसा काम न मिलने से भूखी मरने लगी। आज उसके यहाँ मैंने दस रोटियाँ पहुँचाईं। दूसरी जो दस रोटियाँ बचीं, उससे मेरे दोनों बेटों और नौकरों का काम चला। मेरे हिस्से में डेढ़ रोटी आई। फिर भी तसल्ली थी कि मेरी रोटियों से मेहरुन्निसा और उसकी दो बेटियों की भूख तो बुझी। मेरा क्या। मेरी तो भूखा रहने की आदत ही हो गई है।

मेरा पड़ोसी हीरासिंह एक नौजवान है। वह मुझे हिम्मत बँधाता है। इस आधे वीरान और आधे आबाद शहर में शिवजी राम भी तो हैं जो मुझसे कहते हैं कि मुसीबत के ये दिन कभी-न-कभी तो खत्म होंगे। उनका लड़का बालमुकुन्द मुझे अपने पिता की तरह चाहता है। जब मैं बीमार पड़ा, बालमुकुन्द अँग्रेज़ सिपाहियों की नज़रों से बचते-बचाते एक हकीम को मेरे पास ले आया। हकीम की दवा से मेरी जान बची। मुझे ज़िन्दगी बालमुकुन्द की मदद से ही वापस मिली। दूर के दोस्तों में मेरठ के हरगोपाल "तुफ्ता" हैं। वे शायरी करते हैं। उन्होंने मुझे अपने घर मेरठ से नगद रुपया भेजा है। गेहूँ की कुछ बोरियाँ भी "तुफ्ता" के आदमी मेरे घर रख गए हैं। उन्होंने कहला भेजा है कि मैं फिक्र न करूँ। वे मेरी मदद हर किस्म से करते रहेंगे।

ये बातें, जिनका लिखना ज़रूरी नहीं था, सिर्फ इसलिए लिखीं कि इन लोगों की दरियादिली और हमदर्दी का शुक्रिया अदा हो जाए। रातों को चिराग नहीं जलते। दिन में चूल्हे नहीं सुलगते। जब अनाज ही नहीं है तो चूल्हे कहाँ से जलें? मकानों के मालिक मार डाले गए हैं। वे होते तो घरों में गल्ला, पानी आता। गालिब, जिसके इस शहर में हज़ारों दोस्त थे, इस तनहाई और अकेलेपन में सिर्फ अपनी कलम के सहारे ही ज़िन्दा बचा रह गया है। उसके सारे दोस्त एक-एक कर मार डाले गए। मेरी आत्मा में अब केवल दुख ही दुख है। मैं अपना बिस्तर और कपड़े बेच-बेच कर ज़िन्दगी गुज़ार रहा हूँ। दूसरे लोग जिस तरह से रोटियाँ खाते हैं, मैं कपड़े खा रहा हूँ। डरता हूँ कि जब सब कपड़े खा लूँगा, तो नंगा ही भूखा मर जाऊँगा। चकमक

गोविन्द शर्मा

नत्थू का बचना

बात हरियाणे की है। एक बड़े बरामदे की छत के नीचे बैठी बारात खाना खा रही थी। कचौरियाँ बाँटने वाला सबकी थाली में दो-दो कचौरियाँ रख रहा था। संयोग से वह नत्थू की थाली में कचौरियाँ रखना भूल गया। नत्थू को बुरा लगा। सबकी थाली में कचौरी पर मेरी थाली में नहीं।

उसने कचौरियाँ माँगना ठीक नहीं समझा। पर ज़ोर से बोला, "भूकम्प आ जाए। और बरामदे की छत्त नीचे आ गिरे।" दूसरे बारातियों ने उसे डाँटा। "अरे भाई, ऐसी बातें क्यों कर रहे हो?" पर वह नहीं माना। बार-बार एक ही बात कहता रहा। "भूकम्प आ जाए। छत्त गिर जाए।" उसकी बात सुनकर सुरजा को गुस्सा आ गया। बोला, "रै मूरख, जो छत्त नीचे आ गिरी तो हम सब तो दब ज्यांगे, पर तू के बच ज्यागा?"

नत्थू उससे भी ज़्यादा गुस्से में अपनी थाली की ओर इशारा करके बोला, "क्यूँ न बचूँगा? इब बी तो बच र्‌या हूँ।" चकमक

माथापच्ची

एक थैली में कुछ रुपए और कुछ चवन्नियाँ हैं। अगर रुपयों को चवन्नियों में और चवन्नियों को रुपए में बदल दे तो कुल राशि में 15 रुपयों की कमी हो जाती है। तुम्हें बताना है कि शुरुआत में थैली में कितने पैसे थे?

एक तालाब में कुछ कमल खिले हैं और उन पर कुछ भँवरें मँडरा रहे हैं। अगर हर कमल पर दो-दो भँवरे बैठें तो एक कमल बच जाएगा। और अगर एक ही भँवरा बारी-बारी से हर फूल पर बैठे तो एक भँवरा बच जाएगा। ज़रा बताओ तो तालाब में कितने फूल और कितने भँवरे हैं?

14 संगमरमर के टुकड़ों को तुम्हें 4 बक्सों में इस तरह रखना है कि दूसरे बक्से में तीसरे से दो टुकड़े ज़्यादा हों, तीसरे में चौथे बक्से से 1 टुकड़ा ज़्यादा हो और चौथे बक्से में पहले बक्से से दुगुने टुकड़े हों।